Daily News

जरूरी है एपीआई में आत्मनिर्भरता

आखिर भारत में ऐसी क्या कमी है कि वह एपीआई के मामले में चीन पर निर्भर है? अगर भारत को फार्मा इंडस्ट्री में अपना वर्चस्व स्थापित करना है, तो एपीआई के क्षेत्र में अपना दबदबा बनाना होगा। इसके लिए सरकार के साथ उद्योगपतियों को भी सक्रियता दिखानी होगी।

संदीप नरूला
स्वास्थ्य प्रबंध विशेषज्ञ

यदि भारत एपीआई निर्माण के मामले में गंभीरता से ध्यान दे, तो न केवल उसकी आयात पर निर्भरता कम होगी, बल्कि वैश्विक दबदबा भी बढ़ेगा, क्योंकि फिर दवा निर्माण के लिए उसे किसी देश से एपीआई आयात की जरूरत नहीं होगी और वह तेजी से दवाइयां बनाने में कामयाब होगा। इससे देश में तो दवाइयों की आपूर्ति बढ़ेगी ही, दवा निर्यात में उसका हिस्सा भी बढ़ेगा। इससे रोजगार सृजन के साथ विदेशी मुद्रा अर्जन में भी आसानी होगी।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भारत को आत्मनिर्भर बनाने पर जोर दिया है। इस लिहाज से दवा निर्माण में काम आने वाले एपीआई (एक्टिव फार्मास्युटिकल इन्ग्रेडिएंट) की आयात पर निर्भरता खत्म करने पर भी ध्यान दिया जाना आवश्यक है। नब्बे के दशक में एपीआई सेक्टर में भारत का दबदबा था, परन्तु कई नीतियों और नियमों में परिवर्तन के चलते और घटते मुनाफे की वजह से कई कंपनियां बंद हो गईं या उन्होंने अपने आप को इस सेक्टर से अलग कर लिया। इसी अंतराल में चीन ने अपने आप को एपीआई सेक्टर में मजबूत किया और इसके परिणाम हम सब के सामने हैं। आज भारत, चीन से लगभग 70 प्रतिशत एपीआई और इंटरमीडिएट्स आयात करता है।

एपीआई एक ऐसा केमिकल होता है जो दवा में मौजूद होता है और मर्ज को ठीक करने में अपना योगदान देता है। जैसे क्रोसिन में पैरासिटामोल एपीआई है, परन्तु पैरासिटामोल के साथ इसमें कुछ और भी तत्व शामिल होते हैं जिन्हें हम इंटरमीडिएट्स के नाम से जानते हैं। अमूमन यह इंटरमीडिएट्स पैरासिटामोल को स्थिरता प्रदान करते हैं। यही पैरासिटामोल हमें न सिर्फ टेब्लेट के रूप में मिलता है, बल्कि यह सिरप और इंजेक्शन के रूप में भी मिलता है। क्रोसिन जैसी दवा में केवल एक एपीआई उपयोग में लिया जाता है, जबकि कई दवाएं, जो की कॉम्बिनेशन दवाएं होती हैं, एक से ज्यादा एपीआई से बनती है। आज भारत चीन से कई तरह की बीमारियों जैसे की हाइपरटेंशन (डिलेक्सिन एवं लोसार्टन), डायबिटीज (मेटफोर्मिन एवं ग्लिमेपिराईड), ट्यूबरक्लोसिस (आइसोनियाजिड व स्ट्रेप्टोमाइसिन) के लिए एपीआई आयात करता है और इनमें से कई दवाएं नेशनल लिस्ट ऑफ एसेंशियल मेडिसिन में शामिल हैं। एंटीबायोटिक्स के उत्पादन में विशेषकर मैक्रोलिडेस, पेनिसिलिन इत्यादि में तो भारत का एपीआई का आयात 90 प्रतिशत तक है और यह हमारे लिए अति गंभीर विषय है। चीन में जब कोरोना का संक्रमण आरम्भ हुआ था, तब भारत में इन दवाइओं का उत्पादन खतरे में आ गया था, क्योंकि भारत इन दवाओं में काम आने वाले एपीआई, इंटरमीडिएट्स एवं की सोर्सिंग मेटेरियल्स का बड़ी मात्रा में आयात करता है।

नेशनल लिस्ट ऑफ एसेंशियल मेडिसिन्स(2015) की लिस्ट में 376 दवाएं हैं और इनमें से कई दवाओं में भारत की आयात निर्भरता 70 प्रतिशत से अधिक है। इनमें ब्लडप्रेशर डायबिटीज, एंटीबायोटिक्स, एंटीइन्फ्लेमेटरी, एंटीट्युबरक्लोसिस, एंटी प्रोटोजोअल के एपीआई प्रमुख हैं। ये समस्त दवाएं राष्ट्रीय स्वास्थ्य सुरक्षा के हिसाब से अत्यंत आवश्यक हैं। इसलिए इतना ज्यादा आयात पर निर्भर करना और वह भी एक ही देश चीन से चिंता का विषय बना है।

इंडियन ड्रग्स मनुफेक्चरर्स एसोसिएशन (आईडीएमए) ने 2017 में एक सूची जारी की थी, जिसमें उपरोक्त दवाओं में से 17 प्रमुख एपीआई के प्लांट बंद पड़े हैं और यह अधिकांश प्लांट्स 80 व 90 के दशक में बंद हुए, क्योंकि दूसरे देशों के मुकाबले भारत के एपीआई की कीमत ज्यादा रहती थी और सरकार की तरफ से भी कोई सकारात्मक रुख दवा निर्माताओं को नहीं मिला। इसलिए ये सभी प्लांट्स अब पूरी तरह से बंद पड़े हैं।

आखिर भारत में ऐसी क्या कमी है कि वह एपीआई के मामले में चीन पर निर्भर है? अगर भारत को विश्व पटल पर फार्मा इंडस्ट्री में अपना वर्चस्व स्थापित करना है, तो एपीआई के क्षेत्र में अपनी खोए हुए स्थान को पुनः प्राप्त करना होगा और अपना दबदबा बनाना होगा।उद्योगपतियों को सक्रियता दिखानी होगी और एपीआई के क्षेत्र में आने वाली अपनी समस्याओं से सरकार को अवगत कराना होगा।

विश्व पटल पर चीन एपीआई के मामले में आयतन के हिसाब से लगभग 20 प्रतिशत का अपना हिस्सा रखता है। यह सब वह इसलिए कर पाता है क्योंकि वहां एपीआई के इंफ्रास्ट्रक्चर की लागत कम है, कुशल श्रमशक्ति का अभाव नहीं है, सरकार का पूर्ण सहयोग है। इन सब की वजह से चीन के एपीआई की कीमत भारत के एपीआई की तुलना में लगभग 35-40 प्रतिशत कम होती है। इसके अलावा चीन का एपीआई बाजार काफी विविध है, जिसमें लगभग 2000 मोलेक्युल्स का उत्पादन होता है और यह सब उत्पादन के लिए उसके पास लगभग 7500-8000 एपीआई उत्पादक प्लांट्स हैं, जबकि भारत के पास केवल 1500 एपीआई के प्लांट ही हैं। चीन के एपीआई उत्पादकों को कच्चा माल, बिजली और इंफ्रास्ट्रक्चर की काफी कम कीमत देनी पड़ती है और यहीं से एपीआई की कीमतों में काफी अंतर आ जाता है। केवल कुशल श्रमशक्ति के मामले में ही भारत को लाभ मिलता है। अन्यथा बाकी सब में चीन भारत से ज्यादा बेहतर स्थिति में है। इसके अलावा चीन ने पिछले एक दशक में अपने शोध को भी काफी बढ़ावा दिया है। चीन ने अपने रेगुलेटरी बॉडीज को भी दुरुस्त किया है और वह अब यूरोपियन यूनियन, यूएसएफडीए और जापान की रेगुलेटरी बॉडी की तुलना में काम कर रही है। यह भी भारत के लिए एक चुनौती है। चीन ट्रिप्स (ट्रेड रिलेटेड आस्पेक्ट्स ऑफ इंटेलेक्चुअल प्रॉपर्टी राइट्स) और आईपी (इंटेलेक्चुअल प्रॉपर्टी राइट्स) के नियमों की भी पूरी तरह से पालना कर रहा है। डब्ल्यूएचओ पर भी अपना वर्चस्व जमाना शुरू कर दिया है। इस मामले में भी भारत चीन से पीछे है। पिछले कुछ वर्षों में चीन ने थाउजेंड्स टेलेंट प्लान के नाम से एक अभियान चलाया है और इसमें उसने विश्वभर के लगभग 50000 पीएचडीधारी व वैज्ञानिक इकट्ठा किए हैं और अपना एक रिसर्च इकोसिस्टम बनाया है। इस टैलेंट के जरिये वह कई बड़ी मल्टीनेशनल कम्पनियों, यूनिवर्सिटीज और रिसर्च फार्म्स के साथ एमओयू साझा कर रहा है। भारत अभी ऐसी सोच से बहुत दूर है।

एपीआई के मामले में आयात पर निर्भरता रोकने के लिए चीन जैसा ही रणनीति परक काम करना होगा। सीआईआई ने भी अपनी एक रिपोर्ट में बल्क ड्रग इंडस्ट्री को इंफ्रास्ट्रक्चर स्टेटस देने की मांग को उठाया है। फार्मा जगत में वैश्विक स्तर पर तकनीक एवं क्वालिटी के माध्यम से हम एक अच्छी छवि बनाने में कामयाब रहे हैं और कई मायने में भारत की फार्मा इंडस्ट्री चीन की फार्मा इंडस्ट्री से बेहतर मानी जाती रही है। यदि भारत एपीआई निर्माण के मामले में गंभीरता से ध्यान दे, तो न केवल उसकी आयात पर निर्भरता कम होगी, बल्कि वैश्विक दबदबा भी बढ़ेगा, क्योंकि फिर दवा निर्माण के लिए उसे किसी देश से एपीआई आयात की जरूरत नहीं होगी और वह तेजी से दवाइयां बनाने में कामयाब होगा। इससे देश में तो दवाइयों की आपूर्ति बढ़ेगी ही, दवा निर्यात में उसका हिस्सा भी बढ़ेगा। इससे रोजगार सृजन के साथ विदेशी मुद्रा अर्जन में भी आसानी होगी।